1. बादल

वात-बवंडर बिखर चुका है, गगन हुआ निर्मल,
नीले नभ में दौड़ रहे अब एक तुम्हीं बादल।
हर्षमगन हो उजला-उजला दिन है मुसकाया,
उस पर केवल डाल रहे हो, तुम ही दुख-छाया।

कुछ पहले नभ ओर-छोर तक, तुम ही थे छाए,
कड़क, कौंध बिजली की तेरी तुमको धमकाए।
थी रहस्य से भरी हुई तब तेरी घन-वानी,
तप्त धरा की प्यास बुझाई, बरसाकर पानी।

बस काफ़ी है, अब तुम जाओ! वह क्षण बीत गया,
धरती सरस हुई, झंझा का, अब बल रीत गया।
और पवन जो मंद-मंद, तरु, पत्ते सहलाए,
शांत गगन से तुझे उड़ा निश्चय ही ले जाए।

–अलेक्जेंडर पुश्किन : रूसी
मदन लाल 'मधु' : हिंदी

2. युगावतार गाँधी

चल पड़े जिधर दो डग मग में,
चल पड़े कोटि पग उसी ओर,
पड़ गई जिधर भी एक दृष्टि,
गड़ गए कोटि दृग उसी ओर।

जिसके सिर पर निज धरा हाथ,
उसके सिर-रक्षक कोटि हाथ।
जिस पर निज मस्तक झुका दिया,
झुक गए उसी पर कोटि माथ।

हे कोटिचरण, हे कोटिबाहु!
हे कोटिरूप, हे कोटिनाम!
तुम एकमूर्ति, प्रतिमूर्ति कोटि,
हे कोटिमूर्ति, तुमको प्रणाम!

युग बढ़ा तुम्हारी हँसी देख
युग हटा तुम्हारी भृकुटि देख,
तुम अचल मेखला बन भू की,
खींचते काल पर अमिट रेख;

तुम बोल उठे, युग बोल उठा,
तुम मौन बने, युग मौन बना।
कुछ कर्म तुम्हारे संचित कर,
युगकर्म जगा, युगधर्म तना।

युग-परिवर्तक, युग-संस्थापक,
युग-संचालक, हे युगाधार!
युग-निर्माता, युग-मर्ति! तुम्हें,
युग-युग तक युग का नमस्कार।

तुम युग-युग की रूढ़ियाँ तोड़
रचते रहते नित नई सृष्टि,
उठती नवजीवन की नींवें
ले नवचेतन की दिव्य-दृष्टि।

धर्माडंबर के खंडहर पर,
कर पद-प्रहार, कर धराध्वस्त।
मानवता का पावन मंदिर,
निर्माण कर रहे सृजनव्यस्त।

बढ़ते ही जाते दिग्विजयी!
गढ़ते तुम अपना रामराज,
आत्माहुति के मणिमाणिक से,
मढ़ते जननी का स्वर्णताज!

तुम कालचक्र के रक्त सने
दशनों को कर से पकड़ सुदृढ़,
मानव को दानव के मुँह से
ला रहे खींच बाहर बढ़ बढ़;

पिसती, कराहती जगती के
प्राणों में भरते अभय दान।
अधमरे देखते हैं तुमको,
किसने आकर यह किया त्राण?

दृढ़ चरण, सुदृढ़ करसंपुट से
तुम कालचक्र की चाल रोक,
नित महाकाल की छाती पर
लिखते करुणा के पुण्य श्लोक!

कँपता असत्य, कँपती मिथ्या,
बर्बरता कँपती है थरथर!
कँपते सिंहासन, राजमुकुट
कँपते, खिसके आते भू पर,

हैं अस्त्र-शस्त्र कुंठित-लुंठित,
सेनाएँ करतीं गृह-प्रयाण।
रणभेरी तेरी बजती है,
उड़ता है तेरा ध्वज-निशान।

हे युग दृष्टा, हे युग-स्रष्टा,
पढ़ते कैसा यह मोक्ष-मंत्र?
इस राजतंत्र के खंडहर में
उगता अभिनव भारत स्वतंत्र।

–सोहनलाल द्विवेदी